

शहीदे इन्सानियत

आयतुल्लाहिल उज्जमा सैय्यदुल उलमा मौलाना सै० अली नकी नक्वी ताबा सराह

एबादा बिन सामित (मशहूर सहाबी) के साथ भी सोने की बैअ व शरा (खरीदो फ़रोख़्त) के मुआमले में इसी तरह का किस्सा हुआ था और मुआविया ने उनको भी यही जवाब दिया था कि हम इसको किसी तरह बुरा नहीं समझते। एबादा ने कहा मैं तो रसूले खुदा का हुक्म बयान करता हूँ और तुम अपनी राय बयान करते हो। खुदा मुझे इस जगह से निकाले मैं इस सरज़मीन पर हरगिज़ न रहूँगा जिस पर तुम हाकिम हो।¹

इससे मालूम होता है कि एक कशमकश दमिश्क की सियासत और परस्ताराने शरीअत में उस वक़्त से शुरू हो गई थी।

इसकी एक और मिसाल मुलाहेज़ा हो। अब्दुर रहमान बिन सहल अन्सारी तीसरी ख़िलाफ़त के दौर में एक ज़ेहाद के सिलसिले में शाम की तरफ़ गए तो उन्होंने देखा कि ऊँटों पर शराब की मशकें भरी हुई जा रही हैं। वह आगे बढ़े और उन्होंने अपने नैज़े से उन मशकों को चाक कर दिया। गुलामों ने मज़ाहमत (रोकने की कोशिश) की और यह ख़बर मुआविया को पहुँचाई। उन्होंने कहा छोड़ो उस बूढ़े को। उसकी अक्ल जाती रही है। अब्दुर रहमान ने कहा मेरी अक्ल नहीं गई है मगर रसूल अल्लाह^{स०अ०} ने हमको मुमानेअत (मना) फ़रमाई है कि शराब हमारे शिकमों (पेटों) और हमारे ज़ुरुफ़ (बर्तनों) में दाख़िल न हो।²

1 सुनन इब्ने माजा जि/1, पेज/7

2 एसाबा जि/2, पेज/401, असदुल गाबा जि/3, पेज/299

इन्हीं बातों का नतीजा था कि इन सिन रसीदा अफ़राद को जो सहाब-ए-रसूल में महसूब (शुमार) होते थे मुआविया से तनफ़ूर (नफ़रत) पैदा हो गया था। चुनानचे एक दफ़ा ऐसा हुआ कि मुआविया अहले शाम की एक जमाअत के साथ जबकि वह मक्क-ए-मुअज़्ज़ेमा हज को गए हुए थे सुबह सवेरे सअद बिन अबी विकास की तरफ़ से गुज़रे। उन्हें सलाम किया मगर सअद ने सअद हैं। हज़रत रसूल^{स०अ०} के सहाबी। उनका उसूल है कि सूरज तालेअ (निकलने) होने तक किसी आदमी से बात नहीं करते। सअद को यह ख़बर मालूम हुई। कहा इसकी कोई असलियत नहीं मगर ब-ख़ुदा मैं ने इस से बात करना पसन्द न की।³

उसके बाद सलतनते दमिश्क जितनी ताक़तवर होती गई उतना ही उसने इस्लामी तमददुन (तहज़ीब) के बजाये दुनिया-दाराना तमददुन को फ़रोग़ दिया। जिसका नतीजा यह था कि इस्लामी क़द्रो कीमत के मेयार और वह इम्तेयाज़ात ख़त्म हो गए जो इस्लाम के सादा और ग़ुरबा परवर उसूल ने कायम किये थे। उसका एक नमूना है सन 30 हिजरी में हज़रत अबूज़र ग़फ़ारी का जिला वतन किया जाना। उनका एक कुसूर यह था कि वह उस सरमाया परस्ती की मज़ममत करते थे जो उन्हें उस वक़्त इस्लामी मुल्क में नज़र आ रही थी। वह ग़रीब मुसलमानों को भूखा मरते देखते तो

3 अल वोज़ानवल किताब पेज/26

दमिश्क की गलियों में वह आयतें कुरआन की पढ़ते फिरते थे जो सरमाया परस्ती के खिलाफ हैं। वह कहते थे कि जो लोग सोना चाँदी ख़ज़ानों में जमा कर रहे हैं और उन्हें राहे खुदा में सर्फ़ नहीं करते उन्हें मुन्तज़िर रहना चाहिये उस वक़्त का कि जब आतिशे जहन्नम से उनकी पेशानियाँ, उनके पहलू और उनकी पुश्तें दागी जायेंगी।⁴

यह भी था कि वह हुकूमत की खुशमद नहीं करते थे बल्कि मौके पर सच्ची बात कह गुज़रते थे। चुनानचे जब मुआविया ने कस्त्रे ख़िज़रा की तामीर की तो अबूज़र से पूछा, क्यों इसे आप कैसा समझते हैं? हज़रत अबूज़र ने फ़रमाया। अगर तुम ने इसे खुदा के माल से बनाया है तो तुमने ख़यानत की और अगर खुद अपने ज़ाती माल से बनाया है तो इसराफ़ किया।⁵

मिज़ाजे कैसरियत इसका मुतहम्मिल (बरदाश्त) कब हो सकता था? नतीजा यह हुआ कि उनकी शिकायत दारुस सलतनत (राजधानी) मदीने में भेजी गई और वहाँ से हिदायत हुई कि अबूज़र को मदीने रवाना कर दो।⁶

अबूज़र शाम से मदीना भेज दिये गए और यहाँ पहुंच कर बजाए इसके कि मुआविया को कुछ तम्बीह की जाती इस जलीलुल क़द्र सहाबी को मदीने से निकलने का हुक्म हो गया। मुसाफ़िरत और बेसरो सामानी, आस पास कोई हमदर्द कैसा, शनासा तक नहीं, आख़िर यह शदायद (तकलीफ़ें) न उठ सके। सन 33 हिजरी में दाई-ए-अजल को लब्बैक कहा। जब अबूज़र की हालत ख़राब हुई, पास सिर्फ़

बीबी और एक लड़की थी। अबूज़र ने उनको वसीयत की कि मरने के बाद तुम दोनों मिल कर मुझे गुस्ल देना, कफ़न पहनाना और फिर लाश को ले जाकर काफ़ेले की गुज़रगाह पर लिटा देना और जो काफ़ेला उधर से गुज़रे उससे कहना यह रसूले खुदा का सहाबी अबूज़र है, उसको दफ़न करा दो। चुनानचे जब उनका इन्तेक़ाल हो गया तो ग़मज़दा माँ बेटी ने उसी हिदायत पर अमल किया। लाश के साथ सरे राह आकर बैठ गई। इत्तेफ़ाक़न अब्दुल्लाह बिन मसऊद अहले इराक़ के एक काफ़ेले के हमराह जो मक्क-ए-मुअज़्ज़ेमा हज के लिए जा रहा था उधर से गुज़रे। रोती हुई ख़ातून और बच्ची को देखकर ठहर गए और दरयाफ़ते हाल किया। मुसीबत ज़दों ने कहा: “लोगो! रसूल के मज़लूम सहाबी अबूज़र ने ग़ुरबत के आलम में वफ़ात पाई। उन्हीं का लाशा है जो बेगोरो कफ़न पड़ा है। इब्ने मसऊद उनके साथी चीखें मार मार कर रोने लगे और उन्होंने अबूज़र को दफ़न किया।

यह हुकूमते वक़्त की सियासत मुलूकाना के खिलाफ़ पहली कुर्बानी थी, जो रसूल के मुक़द्दस सहाबी हज़रत अबूज़र ग़फ़ारी ने पेश की।

याद रखने की बात है कि यह अबूज़र ग़फ़ारी और अब्दुर्रहमान बिन सहल अन्सारी अपनी फ़र्ज़ शनासी की बिना पर इस्लाम के कायम करदा हुदूद व इम्तेयाज़ात में बड़ी अज़मत के मुस्तहक़ थे मगर मौजूदा सियासत के हुदूद में वह बिल्कुल कम हकीक़त और बे वुक्क़अत हो गए थे। इसके मानी यह थे कि इस्लामी इन्केलाब की जगह क़दामत परस्ताना (बादशाही) इन्केलाब फ़तह पाने लगा और इस्लाम के मुक़र्रर करदा हुदूद के बजाए दूसरे हुदूद व इम्तेयाज़ात कायम हो गए।

4 तबरी जि/5, पेज/66

5 किताबुल बिलदान पेज/156

6 तबरी जि/5, पेज/66

आठवाँ बाब

पैग़म्बरे खुदा^{स०अ०} के बाद इस्लामी मफ़ाद के मुहाफ़िज़ीन, उनमें और मुख़ालिफ़ कूवतों में तसादुम और उसके नताएज।

यह एक नुमायँ हकीक़त है कि पैग़म्बरे इस्लाम के बाद पैग़म्बर के हकीकी विरसादार जो उनके अहलेबैत थे, इस्लामी इन्क़ेलाब और उसके खुसूसियात व इम्तेयाज़ात के मुहाफ़िज़ थे।

दुनिया में आलीशान महेल तामीर हो चुके थे लेकिन उनका वही छोटा सा मकान था जिसमें उन्हें पैग़म्बर ने रख दिया था। दुनिया के महल्लात में रेशमी पर्दे दरवाज़ों पर हो गए थे मगर उनके दरवाज़े पर वही फटा हुआ पर्दा अब भी नज़र आता था। दुनिया के जिस्म पर हरीर व दीबा (रेशमी लिबास) नज़र आता था लेकिन यह खद्दर का मलबूस अब भी ज़ेबतन करते थे।

दुनिया मफ़तूहा ममालिक (जीते हुए मुल्क) की दौलत से चैन करती और ऐश व इशरत में ज़िन्दगी गुज़ारती थी मगर यह अब भी अपने हाथ की मेहनत से रोज़ी कमाना और माले हलाल की तलाश करना अपना फ़र्ज़ समझते थे। और जो दौलत भी मिलती उसे ग़रीबों, मिसकीनों, बेवाओं और यतीमों की नज़र कर देते। और इस बिना पर उनमें और उसके मुतवाज़ी (मुक़ाबले) दूसरे इन्क़ेलाब के अलमबरदारों में कशमकश लाज़मी थी। हज़रत अली^{अ०स०} से मुआविया का तसादुम जिसके बहुत से वाक़ेआत का तज़क़िरा पहले हो चुका है। इसी कशमकश का नतीजा था।

इसमें कोई शक नहीं कि इस वक़्त इसके अलावा जब भी मुक़ाबला पड़ा है दुनिया में आले रसूल^{स०अ०} के साथी कम निकले और यह सिलसिला हमेशा जारी रहा। इसके वजूह इक्तेसादी (माली) भी हैं और सियासी भी। नफ़सियाती भी और नस्ली भी। यह पहले मालूम हो चुका है कि इस्लाम कदीम इम्तेयाज़ात को मिटा कर मसावात (बराबरी) का पैग़ाम लेकर आया था और उसने इम्तेयाज़ सिर्फ़ फ़राएज़े इन्सान की ज़्यादा से ज़्यादा बजा आवरी (अमल) की बिना पर क़रार दिया था। मुशतरिका दौलत (मिल्लत की दौलत) जो माले ग़नीमत से हासिल होती है उसकी इस तरह तक्सीम कि जिसमें जानिबदारी (यिकतरफ़ा) और अदमे मसावात (ना इन्साफी) पैदा हो जाये इस्लाम के उसूल के ख़िलाफ़ थी और इस्लाम के सच्चे मुहाफ़िज़ीन उसके क़रीब न जा सकते थे। इसलिये आले रसूल^{स०अ०} के लिये यह नामुमकिन था कि वह खज़ाने में रुपये जमा करके दौलतमन्द बनें और खुसूसियत से उन लोगों को ज़र व जवाहर से माला माल करें जिनसे उनको अपने एक़तेदार के क़वी बनाने में फ़ाएदे की उम्मीद हो। यहाँ तो यह आलम था कि हज़रत अली बिन अबी तालिब^{अ०स०} जो कुछ बैतुल माल में आता है रोज़ का रोज़ तक्सीम कर देते हैं और फिर बैतुल माल में झाड़ू दिलवा देते हैं और वहीं पर नमाज़ पढ़ते हैं कि वह ज़मीन खुदा के यहाँ गवाही दे कि अली^{अ०स०} ने मुसलमानों के माल के पहुँचाने में मुस्तहक़ लोगों तक दरेग नहीं किया।⁷

इसफ़हान से माल आता है। उस वक़्त इत्तेफ़ाक़ से सात आदमी साहबे इस्तेहकाक़ (ज़रूरत मन्द) मौजूद हैं। आपने तमाम माल के सात

7 इस्तीआब जि/2, पेज/478

बराबर हिस्से कर दिये और एक रोटी भी उस माल में नज़र आ गई तो उसके भी सात टुकड़े करके हर हिस्से में एक टुकड़ा रख दिया। मुमकिन है खयाल किया जाये कि ऐसी छोटी छोटी बातों का आदमी को लिहाज़ नहीं करना चाहिये और उस रोटी को किसी एक हिस्से में शामिल कर दिया जाता तो ब-ज़ाहिर शरीअत के मुताबिक कोई जुर्म न था मगर याद रखना चाहिये कि ज़हनियते अवाम की तशकील इन ही छोटी छोटी बातों से होती है। हज़रत अली^{अ०स०} तो अवाम की ज़हनियत उसी मसावात के साँचे में ढालने का काम अन्जाम दे रहे थे जिसे रसूल^{स०अ०} ने सिखाया था और मुसलमान रसूल^{स०अ०} की रेहलत के बाद उसे भुला बैठे थे।

उसके बर ख़िलाफ़ अमीरे शाम के यहाँ इन बातों की कोई परवा न थी। वहाँ अपने एकतेदार के कायम रखने के लिये खज़ाने का मुँह खुला था और जिसको मतलब का समझा जाता था उसे माला माल कर दिया जाता था। फिर लोग जो इस्तेयाज़ात के आदी हो चुके थे इनका साथ देते या उनका।?

दुनिया की तो यह हालत है कि चाहे मिले मिलाए कुछ नहीं लेकिन अगर मालूम हो कि किसी के पास रुपया बहुत है और खज़ाने में दौलत जमा है तो यही उसका असर कायम होने के लिये काफ़ी होता है। और इसी तरह उसकी साख़ कायम हो जाती है। यहाँ हज़रत अली^{अ०स०} की यह कैफ़ियत कि मिम्बर पर अपनी तलवार के फ़रोख़्त का ऐलान करते हैं और बतलाते हैं कि मुझे एक लिबास की ज़रूरत है जो बग़ैर इस तलवार के फ़रोख़्त किये हुए मुमकिन नहीं है। अब्दुर रज़्ज़ाक मुहद्दिस ने इस रिवायत को नक्ल करके लिखा है कि यह उस हालत में था कि जब

सिवा शाम के तमाम आलमे इस्लाम की सलतनत आपके कब्ज़े में थी।⁸ हर एक हरीस शख्स समझता था कि जिसके पास खुद अपने लिबास के लिये रुपया न हो उसके पास नाहक किसी दूसरे को देने के लिये रुपया कहाँ हो सकता है।

दुनिया ज़ाहरी तमतिराक (चमक दमक) और आओ भगत से भी मरऊब होती है मगर यहाँ यह हालत थी कि जनाबे अमीर^{अ०स०} अपनी हुकूमत के ज़माने में कभी इसको आर न समझते थे कि मीसमे तम्मार की दुकान पर ख़रीद व फ़रोख़्त करें। बाज़ार में कम्बर को साथ ले कर गए और दो पैराहन (लिबास) ख़रीद किये। एक सात दिरहम का और एक पाँच दिरहम का। सात दिरहम का पैराहन कम्बर को दिया और पाँच दिरहम का खुद जेबे बदन किया। कम्बर ने कहा यह ज़्यादा कीमत वाला आप लें। कोई और होता और वह ऐसा करता तो शायद जवाब देता कि मैं मसावात के फ़ैलाने और गुलामों का दर्जा बलन्द करने के लिये ऐसा करता हूँ। अली^{अ०स०} का मकसद यकीनन ऐसा ही था लेकिन अगर यह जवाब देते तो इसमें खुद अदमे मसावात (ना इन्साफ़ी) का पहलू मुज़मर (छुपा) था। सुनने वाले को एहसासे गुलामी ज़रूर पैदा हो जाता इसलिये आपने ऐसा जवाब दिया जो अपने बच्चों को दिया जाता है। फ़रमाया कम्बर! तुम नौ उम्र हो, तुम्हें वही पैराहन अच्छा मालूम होता है। मेरा क्या, मैं यही पहन लूँगा। इन बातों की कद्र अहले दुनिया कहाँ कर सकते थे और उनके दिल पर इन बातों का असर कहाँ कायम हो सकता था।

इसके अलावा इस्लाम ने उन तमाम मुक़तदर

8 इस्तीआब जि/2, पेज/478

अशखास (बड़े लोगों) और जमाअतों के इस्तेयाज़ात को ख़त्म किया था जो उसके पहले बर सरे एक़तेदार थीं। वह मुक़तदर जमाअतें (दौलत मन्द) आपस में कितनी ही रकीबाना चश्मक (दश्मनी) रखती हों लेकिन इस्लाम से ज़ख़्म खुर्दा (हार मानी हुई) वह सब ही थीं। इसलिये इस्लाम के हकीकी मक़सद और कायम कर्दा इस्तेयाज़ के मिटाने में वह सब हम आहन्ग (एक आवाज़) बन सकती थीं क्योंकि उसके मिटाने में उनमें से हर एक के एक़तेदारे रफ़ता (हुकूमत में) की वापसी मुन्हसिर थी और फिर साबिक की शिकस्तों का असर सब ही पर था और सब ही में जज़्बा-ए-इन्तेक़ाम पाया जाता था। फिर यह भी कि इस्लाम ने अपने उसूल मसावात की तलकीन (नसीहत) से खुद कौमे अरब का ब-हैसियते कौम भी इस्तेयाज़े खास ख़त्म किया था। और परदेसियों के हुकूक पर बड़ा जोर दे दिया था और ग़ैर अरबी अनासिर (लोग) जो आते थे उन्हें अरबों के बराबर हुकूक दिये जाते थे। यह बात तमाम अरब ही को खलने की थी। बनी उमय्या ने अपने दौर में अरबी तअस्सुब (हसद) का मुज़ाहरा करके अरबी कौमियत के इस्तेयाज़ की हिमायत की और मवाली और आजाम (अजम की जमा ईरानी नस्ल) की कोर (ज़ोर को) दबाने की कोशिश की। चुनानचे इस दौर के इस्तेयाज़ी खुसूसियात में से यह है कि अरब और ग़ैरे अरब का सवाल पैदा हो गया। बनी उमय्या की इस सियासी रविश का कुदरतन यह नतीजा होना चाहिये था कि अरब ज़्यादा तर बनी उमय्या के तरफ़दार हो जाते। बनी हाशिम इस्लामी उसूल के हामी होने की वजह से अरबी कौमियत के इस जज़्बे की तरफ़दारी नहीं कर सकते थे। इसलिये उनका अरब की

जानिब दारी का पहलू कमज़ोर था। इसकी तस्दीक़ इससे हो सकेगी कि उसके बाद जब बनी उमय्या के ख़िलाफ़ हाशेमियैन यानी बनी अब्बास वग़ैरह ने अलम बलन्द किया तो हाशिमियैन का साथ देने वाले मवाली और अजम ज़्यादा थे।

बनी हाशिम के क़दीमी रिवायात और सयादत (बुजुर्गी) व शराफ़त के इस्तेयाज़ की वजह से अरब ख़ानदानों को उनसे पहले ही हसद व एनाद था। इसलिये नस्ली तअस्सुबात भी मुख़ालिफ़त पर आमादा करते थे और अरब में क़बाइली निज़ाम बड़ी कुव्वत के साथ कायम था। हर क़बीले के सरगरोह (सरदार) और बड़े अफ़राद अपने जज़्बात की बिना पर जिस रास्ते पर जाते थे अवाम और पस्त अफ़राद अहले क़बीला भी उन ही की पैरवी करते थे क्योंकि अवाम का कोई नज़रिया नहीं हुआ करता। वह लीडरों के पाबन्द होते हैं और लीडर ज़्यादातर जज़्बात के शिकन्जे में कैद होते हैं। इन्हीं बातों का नतीजा था कि आले रसूल के मुक़ाबले में उनके मुख़लेफ़ीन की तादाद ज़्यादा रहती थी।

नवाँ बाब

हसने मुजतबा^{अ०स०} की सुल्ह और उसके नताएज

सन⁴⁰ हिजरी (से) सन 60 हिजरी

इन्तेक़ाल फ़रमाने से पहले हज़रत अली बिन अबी तालिब^{अ०स०} ने एक तहरीरी वसीयत नामा इमाम हसन^{अ०स०} के नाम लिखा और उस पर इमाम हुसैन^{अ०स०} और मोहम्मद बिन हन्फ़िया और अपनी दीगर औलाद, अइज़्ज़ा और मख़सूस असहाब की गवाहियाँ लिखवाई और वसीयत नामा हसने मुजतबा^{अ०स०} को सिपुर्द करते हुए

फरमाया कि दुनिया से रुख्सत होते वक्त तुम इसे हुसैन^{अ०स०} के सिपुर्द कर देना।⁹ इसके अलावा एक वसीयत आपने हसन और हुसैन^{अ०स०} दोनों भाईयों से मुशतरक तौर पर फरमाई वह यह थी कि “मैं तुमको फर्ज शनासी की वसीयत करता हूँ और यह कि तुम कभी दुनिया के तलबगार न होना, चाहे वह दुनिया खुद तुम्हारी तलबगार हो, और किसी दुनयवी नुकसान पर कभी रंजीदा न होना और हमेशा हक के लिये ज़बान खोलना और सवाब के लिये काम करना और ज़ालिम के मददे मुकाबिल और मज़लूम के मददगार रहना।¹⁰ मैं तुमको अपनी तमाम औलाद और अइज़्ज़ा और उन लोगों को जिन तक मेरा पैगाम पहुँचे वसीयत करता हूँ कि हमेशा खुदा से डरते रहना और अपने षीराज़े को मुन्तशिर न होने देना और अपने दरमियान झगड़ों को सुलह व आश्टी के साथ तय करते रहना और देखो यतीमों का खयाल रखना, उनकी ख़बर गीरी करते रहना और पड़ोसियों का खयाल रखना इसलिये कि रसूल अल्लाह ने उनके बारे में वसीयत की थी, और देखो कुरआन का खयाल रखना, तुम से बढ़कर कोई कुरआन पर अमल करने वाला न हो, और नमाज़ का खयाल रखना, यह तुम्हारे दीन का सुतून है। और अल्लाह के घर (ख़ाना-ए काबा) का खयाल रखना। ज़िन्दगी भर उसको कभी एकेला न छोड़ना, और देखो खुदा की राह में अपने जान व माल और ज़बान से जेहाद करते रहना। और आपस में सिल-ए-रहेमी (नर्म दिली) रखना, और एक दूसरे के साथ फ़य्याज़ी के साथ पेश आना और देखो कभी ख़ल्फ़े खुदा को नेक आमाल की तरगीब देने और बद आमालियों से रोकने

से बाज़ न आना ताकि तुम पर बुरे लोगों का एकतेदार कायम न होने पाये।¹¹ और देखो मेरे बाद ऐसा न होने पाये कि बनी हाशिम मुसलमानों में मेरे खून के बहाने से ख़ूरेज़ी शुरू कर दें। ज़्यादा से ज़्यादा मेरे खून के किसान (बदला) के तौर पर बस मेरे कातिल को क़त्ल किया जा सकता है। और वह भी इस तरह कि उसको एक ज़रबत की पादाश (जुर्म) में बस एक ही ज़रबत लगाई जाये और उसको हरगिज़ मुसला (आँख, कान, वगैरह को अलग करना) न किया जाये। यानी आज़ा व जवारेह (जिस्म के हिस्सों को काटा न जाए) क़ता न किये जायें। इसलिए कि रसूल अल्लाह^{स०अ०} फरमा गए हैं कि ख़बरदार किसी को मुसला न करो चाहे वह काटने वाला क़त्ता ही क्यों न हो।¹²

नफ़सियात के वाकिफ़कार ख़ूब जानते हैं कि कुछ वह हालात होते हैं जिनमें बात पत्थर की लकीर की तरह सुनने वाले के दिल पर जम जाती है। यह सूरत कि एक बुजुर्ग मर्तबा वाजिबुल इताअत बाप बिस्तरे बीमारी पर है। उसकी रेहलत का हंगाम करीब है और उस वक्त वह अपने तमाम अहले बैत^{अ०स०} में से दो एक सईद फ़रज़न्दों को खुसूसियत के साथ बुलाकर कोई ख़ास बात कहता है। यकीनन उस वक्त की कही हुई बात उन फ़रज़न्दों के दिल व दिमाग़ पर ऐसा असर करेगी जैसा किसी दूसरे सब्रो सुकून के लमहों की बात असर नहीं कर सकती।

11 नहज़ुल बलागा जि/2, पेज/78.79, तबरी और अबुल फर्ज असफ़हानी ने उनमें से अक्सर फ़िक़रात को इमाम हसन^{अ०स०} के नाम के तहरीरी वसीयत नामे में दर्ज किया है। मुकातिलुत तालिबीन पेज/25.27

12 तबरी जि/6, पेज/86, नहज़ुल बलागा जि/2, पेज/80

आम दुनिया से जाने वाले बाप उस वक्त अपनी औलाद से वसीयत अपने घर के निजी मुआमलात के मुतअल्लिक करते हैं मगर आले मोहम्मद^{स०अ०} तो दीन व शरीयत, किताब और सुन्नत को अपने जातियात में दाखिल समझते थे। उन्होंने उस वक्त पर जो वसीयतें की हैं वह सरासर मफादे आम्मा, (आम लोगों के फाएदे) मफादे शरीयत और अहकामे इलाही से मुतअल्लिक थीं।

यूँ तो यह फरज़न्द वह थे जो खुद सही और मुनासिब ही काम करते मगर हज़रत अली इब्ने अबी तालिब^{अ०स०} को तो ब—ज़ाहिर असबाब एक मुरब्बी (शफीक) बाप की तरह अपना फर्ज़ अन्जाम देना था। जिसका नतीजा यह होना चाहिये कि उन वसीयतों का हर हर लफ़्ज़ सआदत शेयार (लाएक मन्द) बेटों के दिल पर नक्श हो जाये। यह अलफ़ाज़ उनके कानों में हमेशा गूँजते रहें कि फर्ज़ शनासी को अपना उसूल रखना। दुनयवी जाह व इक़तेदार के कभी तालिब न होना। दुनयवी नुक़सान की कभी परवाह न करना। ज़बान पर हक़ को जारी रखना। ज़ालिम के मददे मुकाबिल रहना और मज़लूमों के मददगार रहना। चुनौनचे इन तमाम तालीमात को दोनों फरज़न्दों ने अपने अमल से मुजस्सम शक़ल में पेश किया और आपस में हमआहंगी को भी हर सूरत में बरकरार रखा।

यह अलफ़ाज़ कि “खुदा की राह में अपने जान व माल और ज़बान से जिहाद करते रहना अम्नबिल मारुफ़ और नही अनिल मुन्कर (अच्छी बातों की हिदायत और बुरी बातों से ममानियत) को कभी तर्क न करना। ऐसा न हो कि तुम पर बुरे लोगों का इक़तेदार कायम हो जाये।”

खुसूसियत के साथ उनको अमली जामा पहनाने का जिस तरह हुसैन^{अ०स०} को मौका मिला वह दुनिया की तारीख़ में यादगार है।

हज़रत अली इब्ने अबी तालिब^{अ०स०} की वफ़ात के बाद तमाम मुसलमानों ने मुत्तफ़िका तौर पर आपके बड़े फ़रज़न्द इमाम हसन^{अ०स०} की ख़िलाफ़त तस्लीम की। आप पर अपने वालिदे बुजुर्गवार की शहादत का बड़ा असर था। आपने इस मौके पर जो खुत्बा इरशाद फ़रमाया उसमें हज़रत अली बिन अबी तालिब^{अ०स०} के फ़ज़ाएल व मनाकिब तफ़सील के साथ बयान करते हुए खास तौर पर आपकी सीरत और तर्क दुनिया का तज़क़िरा किया और उस ज़िक़्र में गिरया आपके गुलूगीर हुआ और तमाम हाजेरीन भी आपके साथ बे—इख़्तियार रौने लगे। फिर आपने अपने जाती और ख़ानदानी फ़ज़ाएल बयान किये। उसके बाद अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने खड़े होकर लोगों को आपकी बैयत करने की तरफ़ दावत दी। और सबने ब—रज़ा व रग़बत आपकी बैयत की। यह जुमा के दिन 21/माहे रमज़ान सन 40 हिजरी का वाक़ेया है।¹³ आपने उसी वक्त लोगों से साफ़ साफ़ यह कौल व क़रार ले लिया था कि अगर मैं सुलह करूँ तो तुमको सुलह करना होगी और अगर मैं जंग करूँ तो तुम्हें मेरे साथ जंग करना होगी। उसके बाद आप मुल्क के बन्दोबस्त की तरफ़ मुतवज्जेह हुए। अतराफ़ में उम्माल (हुकूमत का काम संभालने वाले) मुकर्रर किये। हुक्काम मुऐय्यन किये और मुक़द्दमात के फ़ैसले करने लगे।

अभी मुल्क हज़रत अली^{अ०स०} के ग़म में सोगवार ही था और हज़रत इमाम हसन^{अ०स०} पूरे तौर पर इन्तेज़ामात भी न कर चुके थे कि मुआविया

13 इरशाद पेज/192

की तरफ़ से आपकी ममलिकत में दरअन्दाज़ी शुरू हो गई और उनके खुफ़िया कारकुन (जासूस) रीशी दवानियाँ (मक्कारियाँ) करने लगे। चुनौतियों के एक शख्स कबील-ए-हुमैर का कूफ़े में और एक शख्स बनी कैन में से बसरा में पकड़ा गया। यह दोनों इस मकसद से आये थे कि यहाँ के हालात से दमिश्क़ में इत्तेला दें और फ़िज़ा को इमाम हसन^{अ०स०} के खिलाफ़ ना-खुशगवार बनायें। ग़नीमत है कि इसका इन्क़ेशाफ़ (पर्दाफ़ाश) हो गया। हमीर वाला आदमी कूफ़े में एक क़साई के घर से और कैन वाला आदमी बसरा में बनी सुलैम के यहाँ से गिरफ़्तार किया गया और दोनों को जुर्म की सज़ा दी गई। इस वाक़ये के बाद हज़रत इमाम हसन^{अ०स०} ने मुआविया को एक ख़त लिखा जिसका मज़मून यह था कि “तुम अपनी दरअन्दाज़ियों से बाज़ नहीं आते हो। तुमने लोग भेजे हैं कि मेरे मुल्क में बगावत पैदा करायेँ और अपने जासूस यहाँ फैला दिये हैं। मालूम होता है कि तुम जंग के ख़्वाहिशमन्द हो। ऐसा है तो फिर तैयार रहो। यह मन्ज़िल कुछ दूर नहीं है नीज़ मुझको ख़बर मालूम हुई है कि तुम ने मेरे बाप की वफ़ात पर तान व तशनीज़ के अलफ़ाज़ कहे। यह हरगिज़ किसी जीहोश (अक्लमंद) आदमी का काम नहीं है। मौत सबके लिए है। आज हमें इस हादिसे से दो चार होना पड़ा तो कल तुम्हें होगा। और हकीक़त यह है कि हम अपने मरने वाले को मरने वाला समझते नहीं। वह तो ऐसा है जैसे कोई एक मकान से मुन्तक़िल होकर अपने दूसरे मकान में जाये और आराम की नींद सोए।” इस ख़त के बाद मुआविया और इमाम हसन^{अ०स०} के दरमियान बहुत से खुतूत की रद्दो बदल (अदला बदली) हुई।¹⁴ बहरहाल

इन वाक़ेआत से यह अम्र बिल्कुल ज़ाहिर हो गया कि अमीरे शाम मुआविया को जनाबे अमीर^{अ०स०} की ज़ात से कोई वक्ती अदावत नहीं थी वरना वह उनकी शहादत के साथ ख़त्म हो जाती बल्कि यह आले रसूल^{स०अ०} से एक मुस्तक़िल दुश्मनी है जिसके नताएज आइन्दा देखिये क्या हों। यह भी इस वाक़ये से साबित हो गया कि मुल्क में दुश्मन के जासूसों और मुख़बिरों के लिए जाये पनाह मौजूद है और अगर दो एक वाक़ेआत का इन्क़ेशाफ़ हुआ और दो आदमी गिरफ़्तार हो गए तो यह यकीन नहीं किया जा सकता कि ऐसे ही कुछ दूसरे लोग मौजूद नहीं हैं जिनका इन्क़ेशाफ़ नहीं हो सका है और जिन्हें काफ़ी काम करने का मौक़ा मिल रहा है। बहरहाल इमाम हसन^{अ०स०} दुश्मन के मुक़ाबले के लिए तैयार थे और हक़ के बारे में उसके साथ कोई मुराआत (रेआयत) करने पर आमादा न थे। बेशक आपको और आपके साथ हुसैन^{अ०स०} को अपने मुल्क की फ़िज़ा की तरफ़ बेइतमिनानी ज़रूर थी। इसलिए कि ख़वारिज (हज़रत अली^{अ०स०} के दुश्मन) के फ़ितने के बाद से खुद अहले कूफ़ा में फूट पड़ चुकी थी और बहुत से लोग ऐसे भी थे जो ब-ज़ाहिर हज़रत अली^{अ०स०} की फौज में शामिल थे मगर क़राबत और दोस्ती या किसी और वजह से ख़वारिज के साथ हमदर्दी रखते थे। हज़रत अमीर^{अ०स०} को खुद उन लोगों की शोरिश पसन्दी, एख़्तेलाफ़े राय और नज़्म (इत्तेहाद) की कमी से इतनी तकलीफ़ और परीशानी थी कि आप मौत के आरज़ूमंद थे। तमाम कुतुबे तारीख़ (इतिहास की किताबों) और बिल-खुसूस नहजुल बलागा में वह खुत्बे आपके दर्ज हैं जो आपकी कबीदा खातिर (रंजीदा) बल्कि रुहानी तकलीफ़ के मज़हर हैं। आपने उनको मुख़ातब करके कभी फ़रमाया

14 इरशाद पेज/192.193

कि तुम ने मेरा दिल पीप से भर दिया और मेरे सीने को ग़म व गुस्से से पुर कर दिया।¹⁵ कभी फ़रमाया कि काश मुआविया मेरे साथ अपनी जमाअत का तुम्हारी जमाअत (साथियों) से तबादला (बदल) कर लेता। इस तरह जैसे सोने के सिक्के का तबादला चाँदी के सिक्के से होता है। यानी तुम में से दस ले लेता और अपनों में का एक मुझे दे देता।¹⁶ कभी फ़रमाया, कितने अफ़सोस की बात है कि अहले शाम बातिल रास्ते पर मुत्तफ़िक् हैं और तुम हक् रास्ते पर हो के बाहम तआवुन (एक दूसरे का साथ) नहीं रखते।¹⁷ अहले शाम अपने हाकिम की इताअत करते हैं दर्राहालेकि वह खुदा की नाफ़रमानी करता है और तुम अपने इमाम का कहना नहीं मानते दर्राहालेकि वह खुदा की इताअत करता है।¹⁸ और कभी फ़रमाया कि तुम लोगों से कहा जाता है कि जिहाद के लिए चलो जाड़े के ज़माने में तो तुम कहते हो कि यह कड़ाके का जाड़ा है हमें इतनी मोहलत दीजिये कि यह सर्दी कम हो जाये और जब तुम से कहा जाता है गर्मी के ज़माने में तो कहते हो कि यह तो तड़ाके की गर्मी है। इतनी मोहलत दीजिये कि यह गर्मी कम हो जाये। अफ़सोस! तुम गर्मी और सर्दी से इतना भागते हो तो तलवार की आँच से और ज़्यादा भागोगे।¹⁹ यही वह जमाअत थी कि जिससे अब इमाम हसन^{अ०स०} को साबिका पड़ा था। आप उन

15 अख़बारुत तुवाल पेज/214, नहजुल बलागा जि/1, पेज/78

16 इरशाद पेज/164, नहजुल बलागा जि/1, पेज/205

17 इरशाद पेज/148, नहजुल बलागा जि/1, पेज/72

18 इरशाद पेज/164, नहजुल बलागा जि/1, पेज/205

19 अख़बारुतुवाल पेज/214, इरशाद पेज/151, नहजुल बलागा पेज/77

लोगों की हालतों से अच्छी तरह वाकिफ़ थे और यकीनन अमीरे शाम को भी अपने जासूसों के ज़रिये से यहाँ के हालात का इल्म हो गया होगा और वह यह भी समझते होंगे कि अमीरुल मोमिनीन हज़रत अली^{अ०स०} की जो हैबत तमाम अरब के कुलूब (दिलों) पर छाई हुई थी वह बिल्कुल उसी दर्जे पर हज़रत हसन^{अ०स०} के लिए अभी हासिल नहीं हो सकती इसलिए उन्हें हिम्मत हुई कि वह यकायक इराक़ पर हमला कर दें। चुनौनचे वह अपनी फ़ौजों को लेकर जसरे मुनहज तक पहुँच गए। अब इमाम हसन^{अ०स०} ने भी मुदाफ़िअत (बचाओ) के इन्तेज़ामात शुरू किये और हुज़्र बिन अदी को भेजा कि वह दौरह करके तमाम मुक़ामात के आमिलों को सूरते हाल का मुक़ाबिला करने पर अमादा करें और लोगों को जिहाद के लिए तैयार करें। मगर अन्दाज़े के बिल्कुल मुताबिक़ यह अफ़सोसनाक सूरत सामने आई कि लोगों ने हुज़्र बिन अदी की कोशिश का गर्म जोशी के साथ इस्तेक़बाल नहीं किया। आम तौर पर जमूद और सर्द मुहरी (बेहिशी) से काम लिया गया। कुछ थोड़ी सी जमइयत मुक़ाबले के लिए तैयार हुई थी तो उसमें कुछ हिस्सा ख़वारिज का था जो किसी न किसी हीले से मुआविया से जंग करना ही चाहते थे। कुछ शोरिश पसन्द और माले ग़नीमत के तलबगार और कुछ लोग सिर्फ़ अपने सरदाराने कबाएल के दबाव से बा—दिले ना—ख़्वास्ता (ना चाहते हुए) साथ हो गए थे। जिन्हें फ़र्ज़ के एहसास से कोई वास्ता न था। थोड़े लोग वह होंगे जो वाक़ेई हज़रत अली^{अ०स०} और इमाम हसन^{अ०स०} के शिया समझे जा सकते हैं।²⁰ बहरहाल हज़रत हसन^{अ०स०} ने कैस बिन सअद बिन (बक़िया पेज नं० 16 पर.....)

20 इरशाद पेज/193

अज़मत के साथ ये हालत थी।

हज़रत की मसावात पसन्दी का ये आलम था कि मरजुल मौत में मिम्बर पर तशरीफ़ ले गए और फ़रमाया अगर मेरे हाथ से किसी को ईज़ा पहुँची हो तो वह अभी मुझसे बदला ले ले। सवादह बिन कैस मजमें में से खड़ा हो गया और अर्ज किया या रसूलल्लाह एक रोज़ आप नाक़े पर सवार तशरीफ़ लिये जा रहे थे आपके हाथ में ताज़ियाना था, मैं नाक़े के करीब से होकर गुज़रा, इस हालत में कि आप नाक़े को ताज़ियाना लगा रहे थे, वह ताज़ियाना मुझपर पड़ गया और मुझको उससे तकलीफ़ हुई मैं उसका किसास चाहता हूँ। हज़रत ने बिलाल से फ़रमाया कि जाकर हमारा ताज़ियाना ममशूक़ ले आओ। बिलाल गए अस्हाब में बेचैनी पैदा हो गई कि इस बीमारी की हालत में रसूलल्लाह(स.अ.व.व.) इस तकलीफ़ को कैसे बर्दाश्त करेंगे। सब समझा रहे हैं मगर सवादह किसी तरह रज़ामन्द नहीं होता। आख़िर ताज़ियाना आया। रसूल सलअम ने उसके हाथ में दे दिया। फ़रमाया कि भाई किसास ले ले। सवादह ने अर्ज किया। या रसूलल्लाह(स.अ.व.व.) जब आपने मेरे जिस्म पर ताज़ियाना लगाया था तो उस वक़्त मेरे जिस्म पर पैराहन न था। आपने बरैहना जिस्म पर ताज़ियाना लगाया था। ये सुनना था कि हज़रत ने पुश्ते मुबारक से लिबास को हटा दिया। जिस्मे मुबारक का खुलना था कि सवादह ने बढ़कर मोहरे नुबुव्वत को बोसा दिया। कहा, क्या मजाल मेरी जो इस जिस्म से ताज़ियाना मस करूँ। अच्छा हुआ कि सवादह ने पहले अपने किसास से दर गुज़र न किया, दुनिया को मालूम तो हो गया कि हमारा पैग़म्बर अमल के किस नुक्ते पर है। वह जो कहता है उसे अमल की आख़िरी हद तक पहुँचा देता है। सवादह की निगाह में रसूल के जिस्म की इज़्ज़त थी। उसने पुश्ते मुबारक की ज़ियारत के बाद ये ज़ुरअत न की कि वह ताज़ियाने को मस करे। हाए अफ़सोस करबला वालों को कौन समझाए

कि हुसैन (अ.) का जिस्मे मुबारक जिसपर तलवारें और नैजे पड़ रहे हैं दर हकीक़त रसूल का प्यारा जिस्म है। मगर अफ़सोस उम्मतें रसूल ने उस जिस्म की कोई इज़्ज़त न की। तलवारों से टूकड़े कर डाला। (माखुज़ अज़ पयामे अमल, इमामिया मिशन लाहौर, पाकिस्तान, अक्टूबर 1957ई. स.4)



(बक़िया पेज नं० 13 का.....)

एबादह अन्सारी को बीस हज़ार की फ़ौज के साथ आगे रवाना किया और खुद मुक़ामे दैर कौब के करीब साबात में जाके क़याम किया। यहाँ पहुँच कर नुमायों तौर से आपको अपने साथियों की सर्द मुहरी का मुशाहिदा हुआ। आपने उन लोगों को जमा करके खुतबा इरशाद फ़रमाया जिसका मज़मून यह था कि “देखो मैं तमाम ख़ल्क से ज़्यादा ख़ल्के खुदा का बही ख़्वाह (बेहतर) हूँ और मुझे किसी मुसलमान से कीना नहीं। आगाह होना चाहिए कि इत्तेफ़ाक़ व इत्तेहाद चाहे तुम्हें नापसन्द हो इख़तेलाफ़ व इफ़तेराक़ से बेहतर है चाहे वह तुम्हें कितना ही पसन्द हो। याद रखो कि मैं तुम्हारे फ़ायदे के लिए तुम से बेहतर सोचने का हक़ रखता हूँ। तुमको लाज़िम है कि मेरी राय से इन्हेराफ़ और मेरे हुक्म की मुख़ालिफ़त न करो। आपकी तक़रीर का ख़त्म होना था कि मजमे में बद-नज़मी पैदा हो गई और ख़वारिज ने पुकार पुकार कर कहना शुरू किया कि यह काफ़िर हो गए, कुछ लोगों ने आप पर हमला करके आपके क़दमों के नीचे से मुसल्ला खींच लिया और दोशे मुबारक पर से चादर भी उतार ली। आप फ़ौरन घोड़े पर सवार हो गए और आवाज़े बलन्द से पुकारा कि कहाँ हैं रबीआ और हमदान। यह दोनों क़बीले इधर उधर से दौड़ पड़े और शोरिश पसन्दों को आपसे दूर किया।²¹

21 इरशाद पेज/194